International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 8 Issue 2, February- 2018
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 6.939 |

भगवान दास मोरवाल कृत 'हलाला' में चित्रित धार्मिक स्त्री शोषण

Pooja Sharma
M.Phil Scholar
University of Jammu, Jammu

भगवान दास मोरवाल जी का पंसदीदा विषय मेवात का मुस्लिम समुदाय रहा है। मेवात एक ऐसा प्रदेश है, जो हरियाण, उत्तरप्रदेश और राजस्थान की सीमाओं से सटा हुआ है। जहां के मुसलमानों ने हिन्दु धर्म छोड़ इस्लामस्वीकार किया है। इसलिए यहां मुसलमानों के जीवन जीने की शैली में मुस्लिम धर्म के साथ-साथ हिन्दु धर्म की भी झलक मिलती है। मेवात मेव बाहुल्य क्षेत्र है। हरियाणा में इसे काला पानी के नाम से भी जाना जाता है। जबकि असलियत यह है कि आज भी मेवात में साम्प्रदायिक सौहार्द्र, रहन-सहन, निष्कलुषता, ईमानदारी, दैनिक आचार-व्यवहार बिल्कुल वैसे है जैसे भारत के किसी एक देहात में होते हैं। **'काला पहाड़','बाबल तेरा देस में'** जैसे उपन्यास के बाद 'हलाला' मोरवाल जी का ऐसा तीसरा उपन्यास है जो मेवात के मुसलमानों के सामाजिक जीवन पर केन्द्रित है, जो मुख्यतः स्त्री समस्या को केन्द्र में रखकर लिखा गया है।

भगवान दास मोरवाल ने समाज में स्त्री मुक्ति से सम्बन्धित प्रश्नों को उपन्यास की कथावस्तु बनाया है। आज के समय में मुस्लिम स्त्रियों को जिस सामाजिक और धार्मिक विरूपण से सबसे अधिक संघर्ष करना पड़ रहा है, वह है तलाक और उससे जुड़ी हलाला जैसी घोर निंदनीय स्त्री विरोधी प्रथा। जिसका लेखक ने नजराना, नियाज और डमरू के माध्यम से उल्लेख किया है। नजराना का पति नियाज, अपने पिता हाजी खुदाबक्ख की बातों में आकर अपनी पत्नी को तलाक दे देता है, लेकिन जब बाद में उसे अपनी गलती का एहसास होता है और वह फिर नजराना को अपनी जिंदगी में वापिस लाना चाहता है, जिसके लिए नजराना को हलाला की प्रक्रिया से गुजरना पड़ता है और इस प्रक्रिया को पूरा करने के लिए वह डमरू जोकिअधेड़उम्रकाव्यक्तिहैऔरअविवाहितहै,का सहारा लेते हैं।

'हलाला' का शाब्दिक अर्थ है- हलाल अथवा जायज। तलाकशुदा औरत किसी दूसरे पुरुष से शादी करे और उसके साथ शारीरिक सम्बन्ध भी स्थापित करे,तभी वह अपने पहले पति के पास वापिस आ सकती है। इसी प्रक्रिया को मुस्लिम समाज में **हलाला** का नाम दिया गया है। तथाकथित तौर पर यह सजा पुरुषों के लिए बनायी गई है यह जानते हुए कि उसकी बीबी पराए मर्द के साथ सम्बन्ध बना चुकी है, तब भी वह उसे दोबारा अपनाता है। वास्तव में यह एक पुरुषवादी साजिश है, जो केवल और केवल स्त्री को प्रताड़ित करने के लिए बनायी गई है। जहां इस प्रथा का उद्देश्य स्त्री और पुरुष को बराबर सबक सिखाना रहा है, लेकिन वहीं यह प्रथा स्त्री-शोषण का एक हथियार बन कर रह गई है।

धर्म के नाम पर स्त्री का शोषण-दमन, उसके अधिकारों का हनन, कोई नई बात नहीं है। धर्म ने हमेशा स्त्रियों को निश्चित दायरे में बाँधकर रखा है और इस सीमा को लांघना स्त्रियों के लिए वर्जित है। धार्मिक ग्रन्थों में भी स्त्री और पुरुषों को एक समान नहीं समझाजाता। पुरुषों द्वारा किये गए दुष्कर्मों की सजा भी स्त्रियों को ही दी जाती है। रामचरितमानस की अहिल्या हो या रामायण की सीता दोनों पुरुष समाज द्वारा छली गई हैं। तुलसीदास जी ने रामचरितमानस के सुन्दरकाण्ड में लिखा है- **ढोर गंवार शुद्र पशु नारी, सकल ताड़ना के अधिकारी**। यह सोच धर्म से ही घर-परिवार तक बनी है और आज तक किसी न किसी रुप में बरकरार है। संसार में सभी धर्मों की महिलाओं का शोषण हो रहा है लेकिन शोषण के तरीके थोड़े अलग हैं। लेखक ने हिन्दु धर्म के मिथकों का भी वर्णन प्रस्तुत किया है- **"पांच-पांच पंडनू ने भी तो अपनी एक ही भावज द्रौपदी सू काम चलायो हो।"**[1],जिससे यह बात स्पष्ट हो जाती है कि प्रत्येक धर्म स्त्री-शोषण का माध्यम बनता आया है।

अगर देखा जाए तो धर्मों में मुस्लिम धर्म की स्त्रियों की हालत कुछ ज्यादा ही शोचनीय है। मुस्लिम स्त्रियाँ उनके धर्म में प्रचलित तलाक, खतना और हलाला जैसी घोर स्त्री विरोधी प्रथाओं को ढो रही है। आज भले ही हमारा देश विकसित हो चुका है लेकिन समाज में स्त्रियों की दशा दयनीय ही बनी हुई है। मुस्लिम समाज में प्रचलित हलाला प्रथा ने तो स्त्री को केवल भोग्या बनाने का ही कार्य किया है। धार्मिक मान्यताओं, रूढ़िवादिता और पिछड़ेपन के चलते नजराना को भी मानसिक और शारीरिक तौर पर इन रूढ़ियों का शिकार होना पड़ता है। नियाज द्वारा उठाये गए गलत कदम की सजा नजराना को ही भुगतनी पड़ती है- **"मौलवी साब ई तो कोई न्याव न हुआ। अन्यायी गलती करे मरद और सजा मिले बिचारी औरत जात।"**[2] वास्तव में तो यह पुरुषों द्वारा बुना गया ऐसा जाल है, जो औरतों को धार्मिक रूढ़ियों और मर्यादाओं में फंसाकर उनका शोषण करता है। धर्म के नाम पर स्त्रियों के पैरों में बेड़ियाँ तो डाल दी जाती है लेकिन जब उनके अधिकरों की बात आती है तो यह धर्मग्रन्थ भी चुप्पी साध लेते है।

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 8 Issue 2, February- 2018
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 6.939 |

धर्म के ठेकेदारों के अनुसार औरतों की दुनिया केवल पति को खुश रखना, उसके सभी हुक्मों का पालन करना, घर-गृहस्थी संभालना, बच्चों की देख-रेख करना आदि तक ही सीमित है। इन कार्यों के अतिरिक्त उसकी अपनी इच्छा-अनिच्छा से सम्बन्धित कर्तव्य का कहीं कोई उल्लेख प्राप्त नहीं होता है- "**शौहर को खुश रखना औरत की सबसे बड़ी इबादत है।**"[3] वास्तव में यह स्त्री विरोधी व्याख्याएँ हैं। अपने-अपने स्तर पर सभी इन धार्मिक कुप्रथाओं की बुराई करते हैं। धर्म के नाम पर प्रचलित ऐसी सारी कुप्रथाओं से मुस्लिम समाज असन्तुष्ट है लेकिन फिर भी इनका प्रचलन मुल्ला-मौलवियों ने अपनी सुविधानुसार किया है। हलाला प्रथा को भी कोई अमल में लाना पसंद नहीं करता लेकिन फिर भी समाज में इस प्रथा का प्रचलन देखा जा सकता है। अल्लाह के नाम पर बनाये गए इस नियम का मुल्ला-मौलवी गलत रूप से इस्तेमाल करते है। उपन्यास का एक बुजुर्ग पात्र दादा टुंडल धर्म के ठेकेदारों की पोल खोलते हुए कहता है-"**या हलाला के नाम पे इनमुफ्ती-मौलवीन्ने हराम मचवा राखो है।**"[4]असल में यही लोग पहले तलाक दिलवाते है फिर औरत को हलाला के लिए मजबूर करते हैं ताकि अपना फायदा बटोर सके और इस प्रकार औरतकठमुल्लों, दलालों और मौलवियों के बीच पीसती रहती है।

उपन्यास का अवलोकन करने से ज्ञात होता है कि धर्म और शरीयत का हवाला देकर कई प्रकार से स्त्री का शोषण किया जाता है। धर्म के ठेकेदारों ने अपनी सहूलियत के लिए हलाला सेंटर तक खोल लिए हैं। जहां ये अपनी इच्छानुसार धन वसूलते है साथ ही ये सेंटर उनकी मौज-मस्ती का अड्डा भी है। हलाला शरीयत के अनुसार ही होना चाहिए। मौलवी इस पर ही जोर देते है। "कम से कम हलाला शरीयत के मुताबिक तो हो, शरीयत के मुताबिक यह हलाला यहनहीं होता कि खाली निकाहकराकर फिर से तलाक दिलवा दो बल्कि उस वक्त तक औरत पहले शौहर के लिए हलालनहीं हो सकती जब तक वह दूसरे शौहर के साथ हमबिस्तर न हो ले।"[5]इन सबके बीच स्त्री कठपुतली बन कर नाचती रहती है। यह सब धार्मिक मान्यताएँ स्त्री के लिएउसकी पसंद नहीं विवशता बनकर सामने आती है। "**ढेड़ इन मुल्ला मौवलीन्ने ही तो हमारो बेड़ा गरक कर राखो।**"[6]

आनन्द प्रकाश त्रिपाठी ने लोकमन का सिरजनहार भगवान दास मोखाल ग्रन्थ में लिखा है कि धर्म का शिकंजा स्त्री हक पर कुठाराघात है। मौजूद समय और समाज में जाति, धर्म, सम्प्रदाय के पाखण्ड और अतिवादी दृष्टि ने इंसानी सरोकारों एवं संवेदना को ज्यादा आघात पहुँचाया है। "धर्म-ग्रन्थों की आड़ लेकर स्त्रियों पर कम अत्याचार नहीं हुए हैं। सामान्यता मुस्लिम समाज कुरान-शरीफ, हदीस और शरीयत के दायरे से बाहर सोचना-विचारना नहीं चाहता।"[7]

आज के समय में जब मुस्लिम स्त्रियाँ शिक्षा प्राप्त कर चुकी है। अपने अधिकरों के प्रति सचेत हैं। अपने अच्छे-बुरे की समझ रखने लगी हैं जिसके परिणामस्वरूप वह अपनी पहचान पाने के लिए आगे आई हैं। उनकी यह लड़ाई समाज में अपना स्वतन्त्र अस्तित्व स्थापित करने, समान अधिकार पाने, वस्तु या माल से इंसान बनने की लड़ाई है। महादेवी वर्मा के शब्दों में,"हमें न जय चाहिए, न किसी से पराजय, न किसी पर प्रभुता चाहिए, न किसी का प्रभुत्व। केवल अपना वह स्थान, वे स्वत्व चाहिए जिनका पुरुषों के निकट कोई उपयोग नहीं हैं।"[8] उपन्यास हलाला कि मुख्य स्त्री पात्र नजराना एक सीमा तक ही सहन करती है। उपन्यास के अन्त में वह अपने अस्तित्व के लिए संघर्षरत् दिखाई देती है। उसे चीजों की, स्थितियों की, कानून की भी जानकारी है। उसके ऊपर सदियों से हो रहे अन्याय को अब वह चुपचाप सहन नहीं करती, बल्कि उस अन्याय के विरूद्ध आवाज उठाती है। पुरुषों की सोची-समझी साजिशों तथा धर्म की रूढ़िवादी मान्यताओं को ढोते-ढोते अब मुस्लिम स्त्रियों की सहनशक्ति जवाब दे गयी है इसलिए नजराना द्वारा मौलवी साहब से पूछा गया प्रत्येक प्रश्न पितृसतात्मक समाज पर एक प्रश्नचिह्न लगाता है। जैसे सारा हक इन मरदन के ही अख्त्यार है.....? मेरे मन में क्या है.....? हम कोई लता-कपड़ा हूँ के जब जी करे पहन लिया और जब जी करे उन्ने उतार केर फेंक दिओ...? आदि प्रश्नों से वह इस क्रूर व्यवस्था के खिलाफ अपना विद्रोह प्रकट करती है। नजराना द्वारा इन शब्दों का प्रयोग स्त्री मन की व्यथा को प्रकट करते है, लेकिन अंत में नजराना इस धार्मिक कुप्रथा का पालन करने से मना कर देती है और अपने भविष्य का स्वतन्त्र निर्णय लेते हुए डमरू के साथ बाकी जीवन व्यतीत करने का फैसला सुनाती है।

अतः कहा जा सकता है कि आधुनिक संदर्भ में स्त्री शिक्षा प्राप्त कर पुरातन स्त्री के मुकाबले में बहुत हद तक अपने अधिकरों के प्रति सजग हो गई है। वह अपनी शक्ति को पहचान रही है। इस बात का प्रमाण हमें इस उपन्यास में नजराना के माध्यम से प्राप्त होता है जब वह सबके सामने अपना अन्तिम निर्णय सुनाती है।उसका यह निर्णय कहीं न कहीं पुरानी मध्युयगीन मानसिकता पर करारा प्रहार है। नजराना अपने स्वतन्त्र अस्तित्व का औचित्य प्रमाणित कर खुद को हिन्दी साहित्य के एक आधुनिक पात्र के रूप में स्थापित करती है।

सन्दर्भः-

1. भगवानदासमोरवाल, हलाला, वाणीप्रकाशन, नईदिल्लीपृष्ठसंख्या 11

2. वहीपृष्ठसंख्या130
3. वहीपृष्ठसंख्या172
4. वहीपृष्ठसंख्या131
5. वहीपृष्ठसंख्या129-130
6. वहीपृष्ठसंख्या140
7. डॉ.शगुफ्तानियाज, अनुसंधान, जुलाई-सितम्बर2017, भगवानदासमोरवालकृतहलालाउपन्यासमेंमुस्लिमनारीविमर्श, डॉमधुकरखरटिपृष्ठसंख्या18
8. महादेवीवर्मा,श्रृंखलाकीकड़ियाँपृष्ठसंख्या23